

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2022 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 7184

=====

नरेन्द्र कुमार धीरज पिता- श्री दुधेश्वर सिंह निवासी ग्राम-मुजफ्फरपुर, थाना-सहार,
पोस्ट-बरुही, जिला-भोजपुर।

... .. याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य, प्रधान सचिव, गृह विभाग, बिहार सरकार, पटना के माध्यम से।
2. प्रधान सचिव, गृह विभाग, बिहार सरकार, पटना।
3. पुलिस महानिदेशक बिहार पुलिस, पटना।
4. आर्थिक अपराध इकाई, अपर पुलिस महानिदेशक, आर्थिक अपराध इकाई, बिहार के माध्यम से।
5. पुलिस महानिरीक्षक, बिहार।
6. पुलिस उप महानिरीक्षक, मुंगेर रेंज, मुंगेर।
7. वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, पटना, जिला-पटना।
8. पुलिस अधीक्षक, लखीसराय, जिला-लखीसराय, सह अनुशासनात्मक प्राधिकारी,
9. सहायक पुलिस अधीक्षक, लखीसराय, जिला-लखीसराय-सह जांच अधिकारी।
10. श्री एस.के. सिंघल, पिता- अज्ञात, वर्तमान में पुलिस महानिदेशक, बिहार पुलिस, सरदार पटेल भवन, बेली रोड, पटना के पद पर तैनात हैं।

... .. प्रतिवादी/ओं

=====

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से:	श्री वाई.वी. गिरी, वरिष्ठ अधिवक्ता
	श्री ब्रिसकेतु शरण पांडे, अधिवक्ता
प्रतिवादी/ओं की ओर से:	श्री मोहम्मद नदीम सेराज (जीपी-5)
	श्री शैलेश कुमार, एसी दू जीपी-5

=====

सेवा कानून—बर्खास्तगी—सेवा से—याचिकाकर्ता ने अपने और अपने रिश्तेदारों के नाम पर संपत्ति जमा की है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत से अधिक है—
याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए, अभियोजन

पक्ष ने साक्ष्य के माध्यम से केवल दो दस्तावेजों पर भरोसा किया है, पहला एफआईआर और; दूसरा निलंबन का आदेश—जाँच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत जाँच रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत होता है कि मामला बिना किसी साक्ष्य का है—अभियोजन पक्ष द्वारा मौखिक या दस्तावेजी कोई सबूत पेश नहीं किया गया था ताकि याचिकाकर्ता द्वारा जमा की गई संपत्तियों की वास्तविक संख्या और उसके विशिष्ट विवरणों के तथ्य को साबित किया जा सके, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके बाजार मूल्य आदि से अधिक है—जाँच अधिकारी की रिपोर्ट विकृत और बिना किसी सबूत के आधार पर रद्द की जाती है- सजा का आदेश केवल तथ्यों का वर्णन है और न तो याचिकाकर्ता द्वारा किए गए बचाव से संबंधित है और न ही याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित संपत्ति/संपत्तियों के बारे में किसी विशिष्ट विवरण का उल्लेख करता है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके प्रमाण से अधिक है, और यह एक गलत आधार पर आधारित है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कई आपराधिक मामले लंबित हैं और याचिकाकर्ता का एक बुरा पूर्ववृत्त है, जो हालांकि याचिकाकर्ता के खिलाफ कभी भी आरोप नहीं लगाया गया था—जाँच रिपोर्ट, सेवा से बर्खास्तगी की सजा का आदेश और; अपीलीय आदेश को रद्द कर दिया गया—रिट को सेवा की निरंतरता के साथ बहाली की दिशा के साथ अनुमति दी गई और सभी परिणामी लाभों के साथ याचिकाकर्ता को बकाया वेतन का भुगतान किया गया। (पैरा 12, 18, 19, 21)

2010 (2) एस.सी.सी. 772; 2009 (2) एस.सी.सी. 570; 2006 (5) एस.सी.सी. 88; 2000 (3) पी.एल.जे.आर. 10; 2006 (4) एस.सी.सी. 713; सीडब्ल्यूजेसी संख्या 16566/2016; 2010 (13) एस.सी.सी. 427; 2022 (1) पी.एल.जे.आर. 169; 2023 (1) पी.एल.जे.आर. 803; 1983 पी.एल.जे.आर. 92—निर्भर किया गया

2018 (3) पी.एल.जे.आर. 329—संदर्भित किया गया

सेवा कानून—वापस मजदूरी—गलत तरीके से समाप्ति—सेवा से—सेवा की निरंतरता के साथ बहाली और 100% वापस मजदूरी सामान्य नियम है—यदि नियोक्ता ने वैधानिक प्रावधानों और/या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन किया है या कर्मचारी या कामगार को पीड़ित करने का दोषी है, तो संबंधित अदालत पूर्ण बैक वेतन के भुगतान का निर्देश देने में पूरी तरह से न्यायसंगत होगी—याचिकाकर्ता सभी के साथ पूर्ण बैक वेतन का हकदार है परिणामी लाभ के साथ। (पैरा 12, 18, 19, 21) (2013) 10 एस.सी.सी. 324—निर्भर किया गया

=====

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

=====

समक्ष: माननीय न्यायमूर्ति श्री मोहित कुमार शाह

सीएवी निर्णय

दिनांक: 17-05-2024

वर्तमान रिट याचिका पुलिस अधीक्षक, लखीसराय द्वारा पारित दिनांक 10.5.2022 के सेवा से बर्खास्तगी के दंड के आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई है, साथ ही दिनांक 25.07.2022 के अपीलीय आदेश को भी रद्द करने के लिए, जिसके तहत पुलिस उप महानिरीक्षक (कार्मिक), बिहार, पटना ने याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया है। अंत में, याचिकाकर्ता ने पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 21.03.2023 के आदेश को चुनौती दी है, जिसके तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन को खारिज कर दिया गया है।

2. याचिकाकर्ता के अनुसार मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता 13.05.1988 को कांस्टेबल के रूप में शामिल हुआ और शुरू में जिला बल, औरंगाबाद में तैनात था, उसके बाद वह विभिन्न स्थानों पर कांस्टेबल के रूप में तैनात रहा और जब वह वर्ष 1998 में नालंदा जिले में तैनात था, तो उसे बिहार

पुलिस पुरुष संघ, नालंदा शाखा, नालंदा का अध्यक्ष चुना गया था। उसके बाद भी याचिकाकर्ता बिहार पुलिस पुरुष संघ का पदाधिकारी/अध्यक्ष बना रहा। वर्ष 2020 में जब प्रतिवादी सं. 10 को पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना के रूप में नियुक्त किया गया था, रिट याचिका (सी) संख्या 310/1996 वाले एक मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के उल्लंघन में, याचिकाकर्ता ने भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका (सिविल) संख्या 001375/2021 के तहत एक रिट याचिका दायर की थी, जिसमें *अन्य बातों के साथ-साथ* बिहार राज्य द्वारा जारी दिनांक 22.09.2020, 19.12.2020 और 18.01.2021 की अधिसूचनाओं को रद्द करने की प्रार्थना की गई थी, जिसके तहत प्रतिवादी संख्या 10 को पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना के रूप में नियुक्त किया गया था। भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ता द्वारा दायर उक्त रिट याचिका में नोटिस जारी किया था, हालांकि, इस बीच, प्रतिवादी संख्या 10 के इशारे पर, व्यक्तिगत प्रतिशोध और बदले की भावना से, याचिकाकर्ता पर आर्थिक अपराध इकाई (जिसे आगे 'ईओयू' कहा जाएगा) द्वारा छापेमारी/तलाशी की गई। दरअसल, ईओयू ने उनके छह भाइयों और भतीजों के घर/निवास पर भी तलाशी ली थी। ईओयू ने तब दिनांक 20.09.2021 को आर्थिक अपराध इकाई पुलिस स्टेशन, पटना केस नंबर 18/2021 के तहत एफआईआर दर्ज की थी। इसके बाद याचिकाकर्ता को दिनांक 20.09.2021 के आदेश के तहत निलंबित कर दिया गया था। 25.10.2021 को लखीसराय जिला आदेश संख्या 266/2022 दिनांक 26.03.2022 के तहत आरोप पत्र जारी कर याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई, जिसमें आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता, उसके भाइयों और भतीजे के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1) (बी) के तहत आर्थिक अपराध इकाई द्वारा आपराधिक मामला दर्ज किया गया है।

और याचिकाकर्ता ने अपनी सेवा अवधि के दौरान 9,47,66,745/- रुपये से अधिक की संपत्ति अर्जित की है, जो उसकी ज्ञात/कानूनी आय के स्रोत से अधिक है।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 02.04.2022 को अपना जवाब दाखिल किया था, जिसमें उसने प्रतिवादी अधिकारियों को उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने में व्याप्त अवैधता के बारे में बताया था तथा उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से संबंधित साक्ष्य प्रस्तुत करने का अनुरोध किया था, तथापि, संचालन अधिकारी/जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता के अनुरोध पर कोई ध्यान दिए बिना दिनांक 29.03.2022 का आदेश जारी कर याचिकाकर्ता को पुलिस केंद्र, लखीसराय में 11:00 बजे उपस्थित होने की तिथि 11.04.2022 निर्धारित की थी, जहां याचिकाकर्ता उपस्थित हुआ था तथा दिनांक 11.04.2022 के पत्र के माध्यम से झूठे आरोप लगाए जाने तथा दस्तावेज प्रस्तुत न किए जाने के संबंध में आपत्ति उठाई थी। उसी दिन यानी 11.04.2022 को जांच अधिकारी ने सुनवाई की अगली तारीख 16.04.2022 तय की थी, जबकि याचिकाकर्ता ने कुछ समय मांगा था क्योंकि वह पीठ और रीढ़ की समस्या से पीड़ित था और उसे चिकित्सा पेशेवर द्वारा पूर्ण आराम की सलाह दी गई थी, जिसके कारण याचिकाकर्ता 16.04.2022 को जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हो सका, फिर भी जांच अधिकारी ने सुनवाई की अगली तारीख 25.4.2022 तय की थी, जबकि याचिकाकर्ता ने फिर से अपनी बीमारी के कारण जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित होने में असमर्थता व्यक्त की थी। दिनांक 25.04.2022 को जांच अधिकारी ने सुनवाई की अगली तिथि 09.5.2022 निर्धारित की थी, तथापि प्रतिवादी संख्या 10 के कहने पर अगले ही दिन अर्थात् 26.04.2022 को अनुशासनात्मक कार्यवाही की सुनवाई 29.04.2022 तक स्थगित कर दी गई तथा

उक्त आशय का पत्र याचिकाकर्ता को विलम्ब से भेजा गया, जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हो सका।

4. याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि यद्यपि याचिकाकर्ता ने 15 दिन की चिकित्सा छुट्टी के लिए चिकित्सा प्रमाण पत्र संलग्न करते हुए आवेदन किया था, तथापि अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 18.04.2022 के आदेश के तहत याचिकाकर्ता द्वारा की गई छुट्टी के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया था। इसके बाद, जांच अधिकारी ने अचानक जांच कार्यवाही समाप्त कर दी और दिनांक 02.05.2022 को एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को सिद्ध पाया गया, जिसके बाद याचिकाकर्ता को दिनांक 04.05.2022 को दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी किया गया, जिसमें उसे तीन दिनों के भीतर अपना बचाव स्पष्टीकरण/जवाब प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया, ऐसा न करने पर उचित कार्यवाही की जाएगी। इसके बाद याचिकाकर्ता ने 07.05.2022 को अपना विस्तृत जवाब दाखिल किया था, हालांकि, उस पर विचार किए बिना, 10.05.2022 का दंड आदेश पारित कर दिया गया, जिससे याचिकाकर्ता को प्रतिवादियों की सेवाओं से बर्खास्त कर दिया गया। इसके बाद याचिकाकर्ता ने अपील दायर करके उक्त आदेश दिनांक 10.05.2022 को चुनौती दी थी, हालांकि, इसे भी पुलिस उप महानिरीक्षक (कार्मिक), बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 25.07.2022 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है। इसके बाद याचिकाकर्ता ने उक्त आदेश दिनांक 25.07.2022 को पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना के समक्ष एक ज्ञापन दायर करके चुनौती दी थी, हालांकि, इसे भी दिनांक 21.03.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है।

5. याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि सम्पूर्ण अनुशासनात्मक कार्यवाही वस्तुतः एकपक्षीय रूप से की गई है, क्योंकि याचिकाकर्ता द्वारा इस

आधार पर दो महीने की छुट्टी दिए जाने का अनुरोध स्वीकार नहीं किया गया कि उसे डिस्क के फैलाव के कारण पूर्णतः आराम करने की चिकित्सकीय सलाह दी गई है, जबकि याचिकाकर्ता ने पटना मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल, पटना के प्रसिद्ध चिकित्सकों द्वारा जारी किए गए चिकित्सकीय पर्चे प्रस्तुत किए थे और जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता के उक्त अनुरोध पर विचार किए बिना ही कार्यवाही शुरू कर दी थी।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि दिनांक 10.05.2022 का दण्ड आदेश कानून की दृष्टि से गलत है, क्योंकि यह केवल याचिकाकर्ता के विरुद्ध दर्ज एफआईआर पर आधारित है और इसके अतिरिक्त, इसे सामान्य प्रशासन विभाग द्वारा जारी दिनांक 18.06.2020 के परिपत्र (अनुलग्नक पी/15) का उल्लंघन करते हुए पारित किया गया है, क्योंकि याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित आय से अधिक सम्पत्ति के संबंध में जांच एजेन्सी का कोई निष्कर्ष नहीं है। सामान्य प्रशासन विभाग के दिनांक 18.06.2020 के परिपत्र (अनुलग्नक पी/15) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि आय से अधिक सम्पत्ति के अस्तित्व के संबंध में आरोप ज्ञापन प्रारंभिक जांच के समापन और आर्थिक अपराध इकाई/जांच एजेन्सी द्वारा आरोप पत्र प्रस्तुत करने के पश्चात ही तैयार किया जाना है। दिनांक 18.06.2020 के उक्त परिपत्र में यह भी प्रावधान है कि विभागीय कार्यवाही में एफआईआर केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य के रूप में कार्य कर सकती है, प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी कहा है कि दिनांक 26.03.2022 के आरोप ज्ञापन के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए साक्ष्य के रूप में केवल दो दस्तावेजों पर भरोसा किया गया है, आर्थिक अपराध पुलिस स्टेशन केस संख्या 18/2021 वाली एफआईआर की एक प्रति और याचिकाकर्ता के निलंबन आदेश

दिनांक 25.10.2021 की एक प्रति और जहां तक जिन गवाहों की जांच की जानी है, उनका संबंध है, उनमें से एक को पुलिस महानिरीक्षक (कल्याण), बिहार, पटना के सहायक का रीडर बताया गया है और दूसरा एडिशनल पुलिस अधीक्षक-सह-जांच अधिकारी, आर्थिक अपराध इकाई, बिहार, पटना का रीडर है। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया है कि वस्तुतः प्रतिवादियों द्वारा भरोसा करने के लिए कोई भी ऐसा साक्ष्य नहीं है, जिससे याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित किया जा सके कि उसने अपनी आय के ज्ञात स्रोत से अधिक संपत्ति अर्जित की है।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इस समय दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट का हवाला देते हुए प्रस्तुत किया है कि उसके पैराग्राफ संख्या 6 का मात्र अवलोकन, जो अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से संबंधित है, यह दर्शाता है कि गवाह संख्या 1 अर्थात् सहायक पुलिस उपनिरीक्षक, राजेश कुमार पांडे, गोपनीय रीडर और पुलिस महानिरीक्षक (कल्याण), बिहार, पटना के सहायक ने आर्थिक अपराध थाना कांड संख्या 18/2021 की उपरोक्त प्राथमिकी और दिनांक 25.10.2021 के निलंबन आदेश को मात्र साबित किया है, जबकि यद्यपि गवाह संख्या 2, अर्थात् श्री अमृतेंदु, शेखर ठाकुर, अपर पुलिस अधीक्षक, आर्थिक अपराध इकाई, बिहार पटना के गोपनीय रीडर सह जांच अधिकारी को नोटिस जारी किया गया था, तथापि उनका साक्ष्य दर्ज नहीं किया गया है। 3 अर्थात् श्री संजय कुमार वर्मा, पुलिस उपाधीक्षक सह प्रभारी अधिकारी, आर्थिक अपराध इकाई, बिहार, पटना संबंधित हैं, उनका साक्ष्य 11.04.2022 को दर्ज किया गया, जिसमें उन्होंने कहा है कि विश्वसनीय स्रोतों से जानकारी मिली है कि याचिकाकर्ता ने अपने और अपने रिश्तेदारों के नाम पर अपनी आय के ज्ञात स्रोत से अधिक संपत्ति अर्जित की है और उक्त आरोप के लिए याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1)(बी) के तहत आर्थिक अपराध इकाई

पुलिस स्टेशन कांड संख्या 18/2021 दिनांक 20.09.2021 को एफआईआर दर्ज की गई है और इसके अलावा इस गवाह ने एफआईआर पर किए गए हस्ताक्षर की केवल पहचान की है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता एल.डी. द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि अभियोजन पक्ष द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान कोई भी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे याचिकाकर्ता के विरुद्ध आय के ज्ञात स्रोत से अधिक संपत्ति अर्जित करने के आरोप को साबित किया जा सके। यह कहा गया है कि जांच अधिकारी ने अपनी जांच रिपोर्ट दिनांक 02.05.2022 में अपने निष्कर्ष में केवल याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों का वर्णन किया है, जैसा कि दिनांक 26.03.2022 के आरोप पत्र में उल्लेख किया गया है और आगे कहा है कि याचिकाकर्ता ने अपने आधिकारिक पद का दुरुपयोग करके, विशेष रूप से पुलिस में एसोसिएशन से जुड़े होने के कारण, अपने आय के स्रोत/कानूनी स्रोत से अज्ञात अनुपातहीन संपत्ति अर्जित की है, जो कुल 545% यानी 5.5 करोड़ रुपये से अधिक है। 9,47,66,745/- तथा इसके अतिरिक्त, रेत खनन से संबंधित कई मामले तथा परिवहन एवं भंडारण और खनिज नियमों के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ विभिन्न पुलिस थानों में कई मामले दर्ज हैं, इसलिए याचिकाकर्ता ने पुलिस की छवि खराब की है, इस प्रकार याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध हो जाते हैं। इसलिए, याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि जांच अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध हो गए हैं, हालांकि, बिना किसी सबूत के। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विभागीय जांच के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे याचिकाकर्ता और उसके रिश्तेदारों द्वारा एकत्रित की गई संपत्ति का सटीक विवरण दिखाया जा सके और साथ ही उसका बाजार मूल्य भी दिखाया जा

सके, इसलिए आरोपों को साबित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है, विशेष रूप से रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों को ध्यान में रखते हुए, जांच अधिकारी का निष्कर्ष, न तो किसी साक्ष्य पर आधारित है और न ही याचिकाकर्ता के खिलाफ पाई गई किसी भी सामग्री पर आधारित है, जो कि विकृत, महत्वहीन है और इसे खारिज किया जाना चाहिए।

8. याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता ने उपरोक्त प्रस्तुतियों के संबंध में अपने तर्कों को पुष्ट करने के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निम्नलिखित निर्णयों का हवाला दिया है:-

- (i) माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा** के मामले में दिया गया निर्णय; (2010) 2 एससीसी 772 में रिपोर्ट किया गया;
- (ii) माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक** के मामले में दिया गया निर्णय; (2009) 2 एससीसी 570 में रिपोर्ट किया गया;
- (iii) माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **एम.वी. बिजलानी बनाम भारत संघ एवं अन्य** में दिया गया निर्णय; (2006) 5 एससीसी 88 में रिपोर्ट किया गया;
- (iv) इस न्यायालय द्वारा **कुमार उपेंद्र सिंह परिमार बनाम बी.एस. सहकारी भूमि विकास बैंक लिमिटेड एवं अन्य** के मामले में दिया गया निर्णय; 2000 (3) पीएलजेआर 10 में रिपोर्ट किया गया;
- (v) **आनंद कुमार बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय; 2018 (3) पीएलजेआर 329 में रिपोर्ट किया गया;
- (vi) इस न्यायालय द्वारा **शकुंतला उर्फ शकुंतला देवी बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** (2016 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 16566) के मामले में दिनांक 11.03.2019 को दिया गया निर्णय।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने अब दिनांक 10.05.2022 के दण्ड आदेश का हवाला देते हुए कहा है कि यह केवल तथ्यों का विवरण

है और इसमें न तो याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव पर विचार किया गया है और न ही दिनांक 07.05.2022 को जारी दूसरे कारण बताओ नोटिस के जवाब में दायर उसके उत्तर पर विचार किया गया है। 4.5.2022 को जारी किए गए आदेश में याचिकाकर्ता और उसके रिश्तेदारों द्वारा अर्जित आय से अधिक संपत्ति के उदाहरणों/विशिष्ट विवरणों और उसके सबूतों का उल्लेख नहीं किया गया है, इसलिए यह भी किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, सिवाय इसके कि यह एक गूढ़ आदेश है, जो उचित विचार-विमर्श को नहीं दर्शाता है, क्योंकि याचिकाकर्ता को दंड देने के लिए कोई ठोस, स्पष्ट और संक्षिप्त कारण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं, जैसा कि 10.05.2022 के दंड आदेश के प्रासंगिक भाग से स्पष्ट होगा, जिसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

"उपयुक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है की संचिका में उपलब्ध अभिलेखों से अपचारी का चरित्र पूर्व से दागदार रहा है एवं सेवा से मुक्त भी हुए है। ये अपने पद का दुरुपयोग कर अपने कुल सेवा काल में पुलिस में एसोसिएशन से जुड़े होने के प्रभाव का अनुचित लाभ उठाते हुए स्वयं तथा अपने परिजनों के नाम पर आय के ज्ञात/वैध श्रोतो से करीब 544 प्रतिशत अधिक 9,47,66,745 (नौ करोड़ सैताल्लिश लाख छयासठ हजार सात सौ पैताल्लिश रूपए) की सम्पत्ति अर्जित किये है जिसके सम्बन्ध में अपचारी द्वारा कोई आयकर विवरणी समर्पित नहीं किया गया है। जिसका विस्तार पुर्बक वर्णन आर्थिक अपराध इकाई थाना काण्ड संख्या 18/2021 के प्राथमिकी में किया गया है।

अतः आरोप, प्रदर्श, गवाहों के बयान एवं संचिता में रक्षित कागजात के गहन समीक्षा के

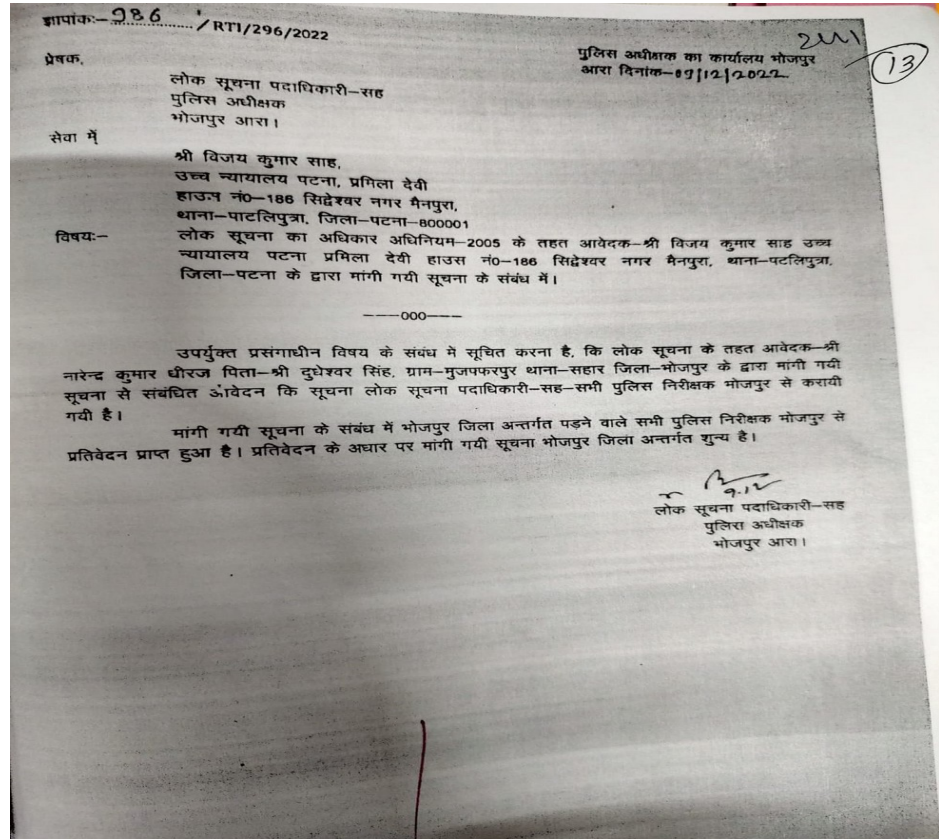
क्रम में स्पष्ट होता है की अपचारी के विरुद्ध 1. पटना रेल थाना काण्ड संख्या 81/08 धारा 147/148/149/323/307/379 भा.द.वि एवं 27 आर्म्स एक्ट के आरोप में मुजफ्फरपुर जिलादेश संख्या 166/11 के द्वारा आंशिक रूप से दोषी पाते हुए दो निन्दन की सजा। 2. मारपीट, गले से सोने का चेन तथा पॉकेट से नकदी छीनने के आरोप में अहियारपुर थाना काण्ड संख्या 28/08 दर्ज किया गया। इन्हे पूर्व में स्थानांतरण के बावजूद भी प्रस्थान नहीं करने के आरोप में मुजफ्फरपुर जिलादेश संख्या

1788/09 द्वारा दिनांक 30.09.2009 से बर्खास्त किया गया था। जो पुनः मुजफ्फरपुर जिलादेश संख्या 1247/10 से पुनः सेवा में बर्खास्तगी की तिथि से बहाल किया गया। अपचारी का चरित्र एक स्वक्ष छवि के पुलिसकर्मी के लिए सही परिलक्षित नहीं होता है। जांच प्राधिकार द्वारा इनके विरुद्ध लगाए गए आरोप प्रमाणित पाया गया है, विभाग के छवि को स्वक्ष बनाये रखने के लिए ऐसे आपराधिक चरित्र एवं अनुशासनहिन् पुलिसकर्मी को को विभाग में बनाये रखना उचित प्रतीत नहीं होता है।

अतः जांच प्राधिकार के मंतव्य से सहमत होते हुए अपचारी सिपाही/72 नरेंद्र कुमार धीरज के विरुद्ध लगाए गए आरोप के लिए दोषी पाते हुए इन्हे तत्काल प्रभाव से सेवा से बर्खास्त किया जाता है। निलंबन अवधी में इन्हे जो कुछ भी मिला है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई वेतनादि का भुगतान नहीं होगा निलंबन अवधी को अर्ध उपार्जित/ असाधारण अवकाश में समायोजित किया जाता है।”

10. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि जांच रिपोर्ट स्वयं कानून की दृष्टि में शून्य है और अपास्त किए जाने योग्य है, फलस्वरूप दण्ड आदेश दिनांक 10.05.2022, अपीलीय आदेश दिनांक 25.07.2022 और याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 21.03.2023 को दायर ज्ञापन पर पारित आदेश, सभी में कोई दम नहीं है और वे भी निरस्त किए जाने योग्य हैं। फिर भी, यह प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि दण्ड आदेश दिनांक 10.05.2022 किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, एक गूढ़ आदेश होने के अलावा, यह उचित विवेक का प्रयोग नहीं दर्शाता है क्योंकि याचिकाकर्ता को बर्खास्तगी की सजा देने के लिए कोई ठोस, स्पष्ट या संक्षिप्त कारण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं, इसलिए इसे इस आधार पर भी अपास्त किया जाना आवश्यक है। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने आगे तर्क दिया है कि इसी तरह, याचिकाकर्ता द्वारा दायर किए गए ज्ञापन पर पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 21.03.2023 का विवादित आदेश भी किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, सिवाय इसके कि यह एक रहस्यमय आदेश है, जिसमें किसी भी तरह के विवेक का प्रयोग

नहीं किया गया है, क्योंकि कोई भी कारण, जो भी हो, प्रस्तुत नहीं किया गया है, इसलिए इसे भी रद्द किया जाना उचित है। अंतिम लेकिन कम से कम नहीं, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने दिनांक 09.12.2022 के एक पत्र का हवाला दिया है, जिसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-



उक्त पत्र दिनांक 09.12.2022 का हवाला देते हुए कहा गया है कि लोक सूचना पदाधिकारी सह पुलिस अधीक्षक, भोजपुर, आरा ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध लंबित मामलों की संख्या के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा मांगी गई सूचना उपलब्ध करा दी है, जिस पर यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई आपराधिक मामला लंबित नहीं है, अतः यह निवेदन किया जाता है कि याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल जापन पर दिनांक 10.05.2022 का दंड आदेश, अपीलीय आदेश दिनांक 25.07.2022 तथा पुलिस महानिदेशक द्वारा पारित दिनांक 21.03.2021 का आदेश सभी गलत आधार पर आधारित है

कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध कई आपराधिक मामले लंबित हैं तथा उसका पूर्व इतिहास खराब है।

11. *इसके विपरीत*, प्रतिवादी-राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता के संबंध में विभागीय कार्यवाही के संचालन में कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता नहीं है, इसलिए यह न्यायालय अपील में नहीं बैठेगा और साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करेगा, इसलिए वर्तमान रिट याचिका किसी भी योग्यता से रहित है, इसलिए खारिज किए जाने योग्य है। वर्तमान मामले में दायर जवाबी हलफनामे का हवाला देते हुए आगे कहा गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1)(बी) के तहत 20.09.2021 को आर्थिक अपराध कांड संख्या 18/2021 के तहत एक आपराधिक मामला दर्ज किया गया था, जिसमें उनके खिलाफ पद और स्थिति का दुरुपयोग करके कई करोड़ रुपये की संपत्ति अर्जित करने का आरोप लगाया गया था, जब वे 15.08.2011 से 16.12.2021 तक पटना जिला बल में कांस्टेबल के रूप में तैनात थे और बिहार पुलिस पुरुष संघ के प्रदेश अध्यक्ष के पद पर भी थे। कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने 2011-12 में 15.08.2011 से 16.12.2021 तक पटना जिला बल में कांस्टेबल के रूप में पदस्थापित थे और बिहार पुलिस पुरुष संघ के प्रदेश अध्यक्ष के पद पर भी थे। 9,47,66,745/-, जिसके बाद याचिकाकर्ता को दिनांक 25.10.2021 के आदेश के तहत निलंबित कर दिया गया और फिर याचिकाकर्ता के खिलाफ लखीसराय जिला विभागीय कार्यवाही संख्या 3/2022 की विभागीय कार्यवाही शुरू की गई और याचिकाकर्ता को दिनांक 26.03.2022 के आदेश के तहत आरोप पत्र दिया गया। श्री सैयद इमरान रसूल, एएसपी, लखीसराय को संचालन

अधिकारी और श्री ललित किशोर, आरएसएम, पुलिस लाइन, लखीसराय को प्रस्तुतकर्ता अधिकारी नियुक्त किया गया। जांच अधिकारी ने विधि के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यवाही करने तथा याचिकाकर्ता को पर्याप्त अवसर प्रदान करने के पश्चात दिनांक 02.05.2022 को अपनी जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, जिसमें याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोप सिद्ध पाए गए थे। तत्पश्चात याचिकाकर्ता को दिनांक 04.05.2022 को दूसरा कारण बताओ नोटिस दिया गया, जिस पर याचिकाकर्ता ने दिनांक 07.05.2022 को अपना जवाब दाखिल किया था तथा तत्पश्चात पुलिस अधीक्षक, लखीसराय द्वारा दिनांक 10.05.2022 के आदेश द्वारा सेवा से बर्खास्तगी का दंड पारित किया गया था। याचिकाकर्ता ने अपील दायर की थी, तथापि, उसे भी पुलिस उप महानिरीक्षक (कार्मिक), बिहार, पटना द्वारा दिनांक 25.07.2022 को पारित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है। बताया जाता है कि याचिकाकर्ता ने इसके बाद एक ज्ञापन दाखिल किया था, हालांकि, इसे भी पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 21.03.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है। प्रतिवादियों के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क दिया गया है कि दण्ड का आदेश दिनांक 10.05.2022 और अपीलीय आदेश दिनांक 25.07.2022 और याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन पर पारित दिनांक 21.03.2023 का आदेश अच्छी तरह से तर्कपूर्ण और विस्तृत आदेश हैं, जिन्हें उचित विचार के बाद और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव पर विचार करने के बाद पारित किया गया है, इसलिए इसमें कोई कमी नहीं पाई जा सकती है, इसलिए वर्तमान रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

12. मैंने पक्षों के विद्वान वकील को सुना है और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अध्ययन किया है। दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट के अवलोकन से पता चलता है कि केवल दो गवाहों की जांच की गई है और जबकि प्रथम गवाह यानी सहायक पुलिस उपनिरीक्षक राजेश कुमार पांडेय, गोपनीय रीडर और पुलिस महानिरीक्षक (कल्याण) के सहायक बिहार, पटना ने केवल आर्थिक अपराध पुलिस स्टेशन कांड संख्या 18/2021 और निलंबन आदेश दिनांक 25.10.2021 को साबित किया है, दूसरे गवाह यानी श्री संजय कुमार वर्मा, पुलिस उपाधीक्षक सह प्रभारी अधिकारी, आर्थिक अपराध इकाई, बिहार, पटना ने अपने साक्ष्य में कहा है कि विश्वसनीय स्रोतों से जानकारी मिली है कि याचिकाकर्ता ने अपने और अपने रिश्तेदारों के नाम पर अपनी आय के ज्ञात स्रोत से अधिक संपत्ति अर्जित की है और उक्त आरोप के लिए आर्थिक अपराध इकाई पुलिस स्टेशन कांड संख्या 18/2021 को दर्ज की गई प्राथमिकी दर्ज की गई है। याचिकाकर्ता के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1)(बी) के तहत दिनांक 20.09.2021 को मामला दर्ज किया गया है, इसके अलावा उसने एफआईआर पर किए गए हस्ताक्षर की पहचान भी की है। इस न्यायालय ने आगे पाया कि अभियोजन पक्ष ने याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए साक्ष्य के तौर पर केवल दो दस्तावेजों पर भरोसा किया है, पहला आर्थिक अपराध पुलिस स्टेशन केस नंबर 18/2021 वाली एफआईआर की कॉपी और दूसरा याचिकाकर्ता के निलंबन का आदेश दिनांक 25.10.2021 है।

13. अब दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट की बात करें तो यह स्पष्ट है कि पहले तीन पैराग्राफ याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों से

संबंधित हैं जबकि पैराग्राफ संख्या 4 में उन दस्तावेजों का उल्लेख है जिन पर याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए भरोसा किया जा रहा है यानी आर्थिक अपराध पुलिस स्टेशन केस संख्या 18/2021 वाली एफआईआर की एक प्रति और याचिकाकर्ता के निलंबन के आदेश की एक प्रति दिनांक 25.10.2021। दिनांक 02.05.2022 की उक्त जांच रिपोर्ट का पैराग्राफ संख्या 5 अपराधी के चरित्र से संबंधित है जबकि पैराग्राफ संख्या 6 अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों से संबंधित है, अर्थात अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षित दो गवाहों के संबंध में, जिन्होंने केवल आर्थिक अपराध इकाई पुलिस स्टेशन मामला संख्या 18/2021 की एफआईआर और 25.10.2021 के निलंबन आदेश को साबित किया है। जांच रिपोर्ट दिनांक 02.05.2022 के पैराग्राफ संख्या 7 में याचिकाकर्ता के बचाव से संबंधित है और उसके बाद जांच अधिकारी का निष्कर्ष दर्ज किया गया है। यह न्यायालय पाता है कि जांच अधिकारी ने अपने निष्कर्ष में याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों से निपटा है और इस तथ्य को भी दर्ज किया है कि हालांकि याचिकाकर्ता को जांच कार्यवाही और उसमें तय तारीखों के बारे में सूचित किया गया था, हालांकि, उसने अपना अंतिम बचाव उत्तर प्रस्तुत नहीं किया, इसलिए वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि चूंकि याचिकाकर्ता के पास अपने बचाव में कहने के लिए कुछ नहीं है, इसलिए आरोप साबित हो जाते हैं, हालांकि, उसके द्वारा निकाले गए ऐसे निष्कर्षों का समर्थन करने के लिए कोई सबूत नहीं है। इस समय, दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट के अंतिम भाग का प्रासंगिक भाग नीचे प्रस्तुत करना प्रासंगिक होगा:-

“इस विभागीय जांच के क्रम में भी अपचारी को कार्यालय ज़ापाइक 872/अनु दिनांक 11.04.2022 के द्वारा संचिका जांच की अगली तिथि दिनांक 16.04.2022 को निर्धारित करते हुए इस विभागीय जांच में अपना बचाव स्पस्टीकरण समर्पित करने हेतु नोटिस हस्तगत कराया गया। इसी तरह कार्यालय ज़ापाइक 874/दिनांक 11.04.2022, ज़ापाइक 914/अनु दिनांक 16.04.2022, ज़ापाइक 1006/अनु दिनांक 26.04.2022, ज़ापाइक 1094/अनु दिनांक 29.04.2022, के द्वारा भी संचिका जांच की तिथि निर्धारित करते हुए जांच की तिथि पर उपस्थित हो कर अपना बचाव स्पस्टीकरण समर्पित करने हेतु निर्देशित किया गया परन्तु अपचारी प्रत्येक नोटिस को स्वयं प्राप्त करने के बावजूद भी इस विभागीय जांच में अपना अंतिम बचाव स्पस्टीकरण समर्पित नहीं किया है। जिससे प्रतीत होता है की अपचारी निलंबित सिपाही नरेंद्र कुमार धीरज को अपने बचाव में आगे कुछ नहीं कहना है। संचिका में उपलब्ध अभिलेखों से अपचारी का चरित्र पूर्व से दागदार रहा है। जो अपने पद का भ्रष्ट दुरुपयोग कर अपने कुल सेवा काल में पुलिस में एसोसिएशन से जुड़े होने के प्रभाव का अनुचित लाभ उठाते हुए स्वयं तथा अपने परिजनों के नाम पर आय के ज्ञात/वैध श्रोतों से करीब 544 प्रतिशत अधिक 9,47,66,745 (नौ करोड़ सैतालिश लाख छयासठ हजार सात सौ पैतालिश रूपए) की सम्पत्ति अर्जित किये है। जिसके सम्बन्ध में अपचारी द्वारा कोई आयकर विवरणी समर्पित नहीं किया गया है। अपचारी के भाई/भतीजा में विजेंद्र कुमार विमल के अतिरिक्त किसी अन्य के द्वारा कोई आयकर रिटर्न दाखिल नहीं किया गया। इससे स्पष्ट है की अपचारी नरेंद्र कुमार धीरज और उनके परिजनों द्वारा धंसोधन कर गलत तरीके से परिसंपत्ति अर्जित किया गया है। अपचारी नरेंद्र कुमार धीरज के परिजनों के विरुद्ध बालू उत्खनन, परिवहन एवं भण्डारण एवं खनिज नियमावली के अधीन भोजपुर ज़िले के विभिन्न थानों में कई काण्ड अंकित है, जिसका विस्तार पूर्वक वर्णन आर्थिक अपराध इकाई थाना काण्ड संख्या 18/21 में किया गया है। अपचारी का यह आचरण भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम 1988 (यथासंशोधित 2018) के अंतर्गत एक संज्ञेय अपराध है, जो अपचारी के भ्रष्ट सरकारी सेवक होने को परिलक्षित करता है। जिससे आम जनता में पुलिस की छवि धूमिल हुई है।

उपयुक्त तथ्यों से अपचारी के ऊपर लगाए गए आरोप के लिए अपचारी दोषी प्रतीत होते हैं।”

14. दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट के अवलोकन से पता चलता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं है। यह एक सामान्य कानून है कि जांच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है, जो दस्तावेजों का विश्लेषण करने के बाद स्वयं

इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर आरोपों को साबित करने की संभावना प्रबल थी, हालांकि, वर्तमान मामले में, जांच रिपोर्ट से यह स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए कोई भी सामग्री/साक्ष्य रिकॉर्ड पर लाने में विफल रहा है, इस प्रकार वर्तमान मामला बिना सबूत का मामला है, इसलिए याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों के बारे में जांच अधिकारी द्वारा निकाला गया निष्कर्ष न केवल विकृत है बल्कि याचिकाकर्ता को दोषी ठहराने के लिए रिकॉर्ड पर उपलब्ध किसी भी ठोस सामग्री पर आधारित नहीं है, इसलिए 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट को खारिज किया जाना चाहिए। फिर भी, मामले का दूसरा पहलू यह है कि जांच अधिकारी ने अपनी जांच रिपोर्ट दिनांक 02.05.2022 में कहा है कि चूंकि याचिकाकर्ता अपना अंतिम बचाव जवाब प्रस्तुत करने में विफल रहा है, इससे पता चलता है कि याचिकाकर्ता के पास अपने बचाव में कहने के लिए कुछ भी नहीं है, इसलिए याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप साबित होते हैं, जो कानून के विपरीत भी है क्योंकि यह एक स्थापित कानून है कि एक जांच अधिकारी, अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण में कार्य करते हुए, एक स्वतंत्र निर्णायक की स्थिति में होता है, इसलिए उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकरण/सरकार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है और उसका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, यहां तक कि दोषी अधिकारी की अनुपस्थिति में या उसके द्वारा कोई बचाव बयान दायर न करने की अनुपस्थिति में भी, यह देखने के लिए कि क्या आरोप साबित होने के लिए अखंडित साक्ष्य पर्याप्त हैं, हालांकि, वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। इस संबंध में, यह न्यायालय **सरोज कुमार सिन्हा**

(सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का संदर्भ देना चाहेगा; जिसके पैराग्राफ संख्या 27, 28, 29 और 30 नीचे पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:-

“27. उपर्युक्त उपनियम के अवलोकन से पता चलता है कि जब प्रतिवादी आरोप-पत्र में स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने में विफल रहा था, तो जांच अधिकारी पर यह दायित्व था कि वह जांच में उसके उपस्थित होने की तिथि निर्धारित करे। केवल ऐसे मामले में जब सरकारी कर्मचारी निर्धारित तिथि की सूचना के बावजूद उपस्थित होने में विफल रहा हो, तो जांच अधिकारी एकपक्षीय जांच कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों में भी जांच अधिकारी पर आरोप-पत्र में उल्लिखित गवाहों के बयान दर्ज करने का दायित्व है। चूंकि सरकारी कर्मचारी अनुपस्थित है, इसलिए वह स्पष्ट रूप से गवाहों की जिरह का लाभ खो देगा। लेकिन फिर भी आरोपों को स्थापित करने के लिए विभाग को जांच अधिकारी के समक्ष आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करने की आवश्यकता है। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि यह आरोप न लगे कि जांच अधिकारी ने अभियोजक के साथ-साथ न्यायाधीश के रूप में भी काम किया है।

28. अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण में कार्यरत एक जांच अधिकारी एक स्वतंत्र निर्णायक की स्थिति में होता है। उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकरण/सरकार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। उसका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, यहां तक कि दोषी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी यह देखना है कि क्या आरोपों को साबित करने के लिए अखंडित साक्ष्य पर्याप्त हैं। वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। चूंकि कोई मौखिक साक्ष्य की जांच नहीं की गई है, इसलिए दस्तावेज साबित नहीं हुए हैं, और यह निष्कर्ष निकालने के लिए उन पर विचार नहीं किया जा सकता है कि प्रतिवादियों के खिलाफ आरोप साबित हुए हैं।

29. उपरोक्त के अलावा, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 311(2) के अनुसार विभागीय जांच प्राकृतिक न्याय के नियमों के अनुसार की जानी चाहिए। प्राकृतिक न्याय के नियमों की यह बुनियादी आवश्यकता है कि किसी भी कार्यवाही में कर्मचारी को सुनवाई का उचित अवसर दिया जाना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप कर्मचारी को सजा दी जा सकती है।

30. जब सरकारी कर्मचारी के खिलाफ विभागीय जांच की जाती है तो इसे आकस्मिक अभ्यास नहीं माना जा सकता है। जांच कार्यवाही भी बंद दिमाग से नहीं की जा सकती है। जांच अधिकारी को पूरी तरह से निष्पक्ष होना चाहिए। प्राकृतिक न्याय के नियमों का पालन न केवल यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि न्याय किया जाए बल्कि

यह भी सुनिश्चित किया जाए कि न्याय किया जा रहा है। प्राकृतिक न्याय के नियमों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सरकारी कर्मचारी के साथ ऐसी कार्यवाही में निष्पक्ष व्यवहार किया जाए, जिसके परिणामस्वरूप उसे सेवा से बर्खास्त/हटाने सहित सजा दी जा सकती है”।

15. यह न्यायालय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रूप सिंह नेगी (सुप्रा) के मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय का संदर्भ देना उचित समझता है, जिसके पैराग्राफ संख्या 14 से 23 नीचे पुनः उद्धृत किए गए हैं:-

“14. निस्संदेह, विभागीय कार्यवाही एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही है। जांच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है। दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित किया जाना चाहिए। जांच अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पक्षों द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री पर विचार करके निष्कर्ष पर पहुंचे। जांच अधिकारी द्वारा सभी आरोपियों के खिलाफ जांच के दौरान एकत्र किए गए कथित साक्ष्य को अनुशासनात्मक कार्यवाही में साक्ष्य नहीं माना जा सकता। उक्त दस्तावेजों को साबित करने के लिए किसी गवाह की जांच नहीं की गई। प्रबंधन के गवाहों ने केवल दस्तावेज पेश किए और उनकी सामग्री को साबित नहीं किया। जांच अधिकारी ने अन्य बातों के साथ-साथ एफआईआर पर भरोसा किया, जिसे सबूत नहीं माना जा सकता था।

15. हमने पहले भी देखा है कि जांच अधिकारी द्वारा जिस एकमात्र बुनियादी साक्ष्य पर भरोसा किया गया है, वह अपीलकर्ता द्वारा पुलिस के समक्ष किया गया कथित कबूलनामा है। अपीलकर्ता के अनुसार, उसे उक्त कबूलनामे पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया था, क्योंकि उसे पुलिस स्टेशन में प्रताड़ित किया गया था। अपीलकर्ता बैंक का कर्मचारी है, इसलिए उक्त कबूलनामे को साबित किया जाना चाहिए था। यह दिखाने के लिए कुछ सबूत रिकॉर्ड पर लाए जाने चाहिए थे कि वह बैंक ड्राफ्ट बुक चुराने में शामिल था। बेशक, कोई प्रत्यक्ष सबूत नहीं था। यहां तक कि कोई अप्रत्यक्ष सबूत भी नहीं था। रिपोर्ट के सार से पता चलता है कि जांच अधिकारी ने उसे दोषी मानने का मन बना लिया था, अन्यथा वह इस आधार पर आगे नहीं बढ़ता कि अपराध इस तरह से किया गया था कि कोई सबूत नहीं बचा था।

16. यूनियन ऑफ इंडिया बनाम एच.सी. गोयल [एआईआर 1964 एससी 364: (1964) 4 एससीआर 718] में यह माना गया: (एआईआर पृष्ठ 369-70, पैरा 22-23)

“22. ... दोनों कमियाँ अलग-अलग और विशिष्ट हैं, हालांकि, संभवतः, कुछ मामलों में दोनों मौजूद हो सकती हैं। ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहाँ कोई सबूत नहीं है, यहाँ तक कि जब सरकार सद्भाव से काम कर रही हो; उक्त कमियाँ तब भी मौजूद हो सकती हैं जब सरकार दुर्भावनापूर्ण तरीके से काम कर रही हो और उस मामले में, किसी भी सबूत द्वारा समर्थित नहीं सरकार का निष्कर्ष दुर्भावनापूर्ण तरीके से काम कर रहा हो सकता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अगर यह साबित हो जाता है कि सरकार के निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए कोई सबूत नहीं है, तो दुर्भावनापूर्ण तरीके से काम करने के बिना सर्टिओरी की रिट जारी नहीं की जाएगी। यही कारण है कि हम विद्वान अटॉर्नी जनरल के तर्क को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं कि चूंकि वर्तमान मामले में अपीलकर्ता के खिलाफ कोई दुर्भावनापूर्ण आरोप नहीं लगाया गया है, प्रतिवादी के पक्ष में कोई भी रिट जारी नहीं की जा सकती।

23. यह हमें प्रतिवादी के तर्क के गुण-दोष की ओर ले जाता है कि अपीलकर्ता का यह निष्कर्ष कि प्रतिवादी के विरुद्ध तीसरा आरोप सिद्ध हो चुका है, किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है। विद्वान अटॉर्नी जनरल ने हमारे समक्ष इस बात पर जोर दिया है कि इस प्रश्न से निपटने में हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि अपीलकर्ता भ्रष्टाचार को जड़ से मिटाने के दृढ़ संकल्प के साथ काम कर रहा है, और इसलिए, यदि यह दिखाया जाता है कि अपीलकर्ता द्वारा लिया गया दृष्टिकोण एक उचित संभावित दृष्टिकोण है, तो इस न्यायालय को उस निर्णय पर अपील में नहीं बैठना चाहिए और यह तय नहीं करना चाहिए कि क्या यह न्यायालय वही दृष्टिकोण अपनाता या नहीं। यह तर्क निस्संदेह पूरी तरह से सही है। प्रतिवादी के मामले के इस भाग से निपटने में हम जो एकमात्र परीक्षण वैध रूप से लागू कर सकते हैं, वह यह है कि क्या कोई ऐसा साक्ष्य है जिसके आधार पर प्रतिवादी के विरुद्ध यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उसके विरुद्ध आरोप 3 सिद्ध हो चुका है? इस तरह की दलील पर अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय किसी विशेष निष्कर्ष के समर्थन में साक्ष्य की पर्याप्तता या पर्याप्तता के प्रश्न पर विचार नहीं कर सकता है। यह एक ऐसा मामला है जो उस प्राधिकारी की क्षमता के भीतर है जो प्रश्न से निपटता है; लेकिन उच्च न्यायालय यह जांच कर सकता है और उसे जांच करनी चाहिए कि क्या आरोपित निष्कर्ष के समर्थन में कोई सबूत है। दूसरे शब्दों में, यदि जांच में दिए गए सभी सबूतों को सही माना जाता है, तो क्या यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिवादी के खिलाफ आरोप साबित हो गया है? यह दृष्टिकोण सबूतों को तौलने से बचाएगा। यह सबूतों को वैसे ही लेगा जैसा वे हैं और केवल यह जांच करेगा कि क्या उस सबूत के आधार पर कानूनी रूप से

आरोपित निष्कर्ष निकलता है या नहीं। इस परीक्षण को लागू करते हुए, हम यह मानने के लिए इच्छुक हैं कि प्रतिवादी की शिकायत अच्छी तरह से स्थापित है, क्योंकि, हमारी राय में, अपीलकर्ता के आदेश में निहित निष्कर्ष प्रतिवादी को खारिज कर देता है कि उसके खिलाफ आरोप 3 साबित होता है, किसी भी सबूत पर आधारित नहीं है।"

17. मोनी शंकर बनाम भारत संघ [(2008) 3 एससीसी 484: (2008) 1 एससीसी (एलएंडएस) 819] में इस न्यायालय ने माना: (एससीसी पृष्ठ 492, पैरा 17)

"17. विभागीय कार्यवाही एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही है। यद्यपि साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान उक्त कार्यवाही में लागू नहीं होते हैं, फिर भी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन किया जाना आवश्यक है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने वाले न्यायालय इस बात पर विचार करने के हकदार हैं कि क्या किसी अपराधी अधिकारी की ओर से कदाचार किए जाने का अनुमान लगाते समय प्रासंगिक साक्ष्य को ध्यान में रखा गया है और अप्रासंगिक तथ्यों को इससे बाहर रखा गया है। तथ्यों पर अनुमान ऐसे साक्ष्य पर आधारित होना चाहिए जो कानूनी सिद्धांतों की आवश्यकताओं को पूरा करते हों। इस प्रकार, न्यायाधिकरण इस आधार पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने का हकदार था कि विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, भले ही इसे पूरी तरह से सही माना जाए, सबूत के बोझ की आवश्यकताओं को पूरा करता है, अर्थात् संभावना की प्रबलता। यदि ऐसे साक्ष्यों पर आनुपातिकता के सिद्धांत की कसौटी संतुष्ट नहीं हुई है, तो न्यायाधिकरण हस्तक्षेप करने के अपने अधिकार क्षेत्र में था। हमें यह अवश्य कहना चाहिए कि न्यायाधिकरण को इस आधार पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने का अधिकार है कि विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, भले ही इसे पूरी तरह से सही माना जाए, सबूत के बोझ की आवश्यकताओं को पूरा करता है, अर्थात् संभावना की प्रबलता। रिकॉर्ड पर यह बात दर्ज है कि अनुचितता का सिद्धांत आनुपातिकता के सिद्धांत को रास्ता दे रहा है।"

18. नरिंदर मोहन आर्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड [(2006) 4 एससीसी 713] में, जिस पर दोनों विद्वान वकीलों ने भरोसा किया, इस न्यायालय ने माना: (एससीसी पृष्ठ 724, पैरा 26)

"26. हमारी राय में विद्वान एकल न्यायाधीश और परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अपने आप से सही प्रश्न नहीं पूछा। मामले को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। सीमित अधिकार क्षेत्र के बावजूद एक सिविल न्यायालय, ऐसे मामले में हस्तक्षेप करने का हकदार था, जहां जांच अधिकारी की रिपोर्ट किसी साक्ष्य पर

आधारित नहीं थी। सिविल न्यायालय और रिट न्यायालय में एक दोषी कर्मचारी द्वारा दायर किए गए मुकदमे में, यदि विभागीय कार्यवाही में प्राप्त निष्कर्षों पर उसके समक्ष प्रश्न उठाए जाते हैं, तो उसे निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

- (1) जांच अधिकारी को जांच के दौरान बाहरी स्रोतों से कोई भी सामग्री एकत्र करने की अनुमति नहीं है। (देखें असम राज्य बनाम महेंद्र कुमार दास [(1970) 1 एससीसी 709]।
- (2) घरेलू जांच में प्रक्रिया में निष्पक्षता प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का एक हिस्सा है। (देखें खेम चंद बनाम भारत संघ [एआईआर 1958 एससी 300] और उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ओम प्रकाश गुप्ता [(1969) 3 एससीसी 775]।
- (3) विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग में दो तत्व शामिल हैं- (i) वस्तुनिष्ठ, और (ii) व्यक्तिपरक और वस्तुनिष्ठ तत्व के प्रयोग का अस्तित्व व्यक्तिपरक तत्व के प्रयोग के लिए एक शर्त है। (देखें केएल त्रिपाठी बनाम एसबीआई [(1984) 1 एससीसी 43]।
- (4) प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के किसी भी कठोर नियम को निर्धारित करना संभव नहीं है जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है लेकिन कार्रवाई में निष्पक्षता की अवधारणा आधार है। (देखें सवाई सिंह बनाम राजस्थान राज्य [(1986) 3 एससीसी]।
- (5) जांच अधिकारी को आरोपों से परे यात्रा करने की अनुमति नहीं है और किसी भी ऐसे निष्कर्ष के आधार पर लगाया गया दंड जो आरोपों का विषय नहीं था, पूरी तरह से अवैध है। (एक्सपोर्ट इंस्पेक्शन काउंसिल ऑफ इंडिया बनाम कल्याण कुमार मित्रा [(1987) 2 कैल एलजे 344] देखें।
- i. (6) संदेह या अनुमान घरेलू जांच में भी सबूत की जगह नहीं ले सकता। रिट कोर्ट को कुछ परिस्थितियों में किसी भी न्यायाधिकरण या प्राधिकरण के तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है। (देखें सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम प्रकाश चंद जैन [एआईआर 1969 एससी 983] और कुलदीप सिंह बनाम पुलिस कमिश्नर [(1999) 2 एससीसी 10]।”

19. नरिंदर मोहन आर्य मामले [(2006) 4 एससीसी 713] में प्रतिवादी के खिलाफ पारित निर्णय और डिक्री अंतिम हो गई थी। उक्त मुकदमे में अनुशासनात्मक कार्यवाही में जांच रिपोर्ट पर विचार किया गया, उसे बिना किसी साक्ष्य के आधार पर माना गया। अपीलकर्ता ने उपर्युक्त स्थिति में अनुशासनात्मक कार्यवाही की वैधता पर सवाल उठाते हुए एक रिट याचिका दायर की, जिसे खारिज कर दिया गया। इस न्यायालय ने माना कि जब जालसाजी जैसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष पर ऐसे साक्ष्य के आधार पर पहुंचा जाता है जो कानून की नजर में गैर-कानूनी है, तो सिविल न्यायालय को मामले में हस्तक्षेप करने का अधिकार होगा। इस न्यायालय ने जोर दिया कि यदि रिकॉर्ड पर कुछ साक्ष्य हैं तो जांच अधिकारी द्वारा निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है। इसके अलावा यह भी पाया गया कि अपीलीय प्राधिकारी के आदेश में विवेक का प्रयोग नहीं किया गया था।

20. इस न्यायालय ने कैप्टन एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइंस लिमिटेड [(1999) 3 एससीसी 679: 1999 एससीसी (एलएंडएस) 810] में अपने पहले के फैसले का हवाला देते हुए कहा: (नरिंदर मोहन आर्य केस [(2006) 4 एससीसी 713: 2006 एससीसी (एलएंडएस) 840], एससीसी पृष्ठ 729, पैरा 41-42)

“41. यह नहीं समझा जा सकता कि हमने ऐसा कोई कानून बनाया है कि ऐसी सभी परिस्थितियों में सिविल कोर्ट या आपराधिक कोर्ट का फैसला अनुशासनात्मक अधिकारियों पर बाध्यकारी होगा, क्योंकि इस न्यायालय ने कई फैसलों में बताया है कि यह अन्य कारकों पर भी निर्भर करेगा। उदाहरण के लिए देखें कृष्णकली टी एस्टेट बनाम अखिल भारतीय चाह मजदूर संघ [(2004) 8 एससीसी 200] और आरबीआई बनाम एस मणि [(2005) 5 एससीसी]। इसलिए, प्रत्येक मामले पर उसके अपने तथ्यों के आधार पर विचार किया जाना चाहिए।

42. यह भी समान रूप से स्थापित है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने से उच्च न्यायालय द्वारा इनकार नहीं किया जाएगा, हालांकि इसके बावजूद ऐसा करना वैध होगा। आरबीआई [(2005) 5 एससीसी] में इस न्यायालय ने कहा:

‘39. विद्वान न्यायाधिकरण के निष्कर्ष, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, पूरी तरह से गलत हैं। इसने स्पष्ट रूप से खुद से गलत प्रश्न पूछे हैं। इसने गलत तरीके से अपीलकर्ता पर सबूत पेश

करने का भार डाला है। इसका निर्णय अप्रासंगिक कारकों पर आधारित है जो तथ्यों के सही निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से प्रासंगिक नहीं हैं। यह प्रासंगिक कारकों पर विचार करने में भी विफल रहा है। इस प्रकार, न्यायिक समीक्षा का मामला बनता है।'

उस मामले में भी, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस आधार पर कार्यवाही की कि नियोक्ता का नुकसान यह है कि ऐसे कार्य गोपनीयता में और दुर्घटना से प्रभावित व्यक्ति के साथ साजिश में किए जाते हैं, जिसमें कहा गया है: (नरिंदर मोहन आर्य केस [(2006) 4 एससीसी], एससीसी पृष्ठ 730, पैरा 44-45)

"44. ... अनुशासनात्मक कार्यवाही में भी ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला गया है और न ही अपीलकर्ता के खिलाफ इस संबंध में कोई आरोप लगाया गया है। उसे इस पर अपनी बात कहने का कोई अवसर नहीं मिला। निस्संदेह, रिट कोर्ट कुछ साक्ष्य या कोई साक्ष्य नहीं होने के बीच के अंतर को ध्यान में रखेगा, लेकिन जो प्रश्न पूछा जाना आवश्यक था और आवश्यक होना चाहिए था वह यह था कि क्या कुछ साक्ष्य प्रस्तुत करने से दोषी अधिकारी के अपराध के संबंध में निष्कर्ष निकाला जा सकता है या नहीं। प्रबंधन की ओर से प्रस्तुत साक्ष्य का आरोपों से संबंध होना चाहिए। जांच अधिकारी अपने निष्कर्षों को केवल परिकल्पना पर आधारित नहीं कर सकता। उसकी ओर से केवल स्वयं द्वारा दी गई गवाही साक्ष्य का विकल्प नहीं हो सकती।

45. विद्वान एकल न्यायाधीश के निष्कर्ष कि 'यह न्यायालय के विवेक से स्थापित है, जिसे जांच अधिकारी द्वारा तर्कसंगत रूप से तैयार किया गया है' पूरी तरह से सही नहीं हो सकता है, क्योंकि न्यायालय को न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि निष्कर्षों को बनाए रखने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त सामग्री लाई गई थी या नहीं। न्यायालय के विवेक की शायद बहुत अधिक भूमिका नहीं है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए तर्कों पर बिल्कुल भी

विचार-विमर्श नहीं किया। कानूनी सिद्धांतों को लागू करने के उद्देश्य से रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्रियों पर चर्चा अनिवार्य थी। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी यही गलती की।"

21. एम.वी. बिजलानी बनाम भारत संघ [(2006) 5 एससीसी 88: 2006 एससीसी (एलएंडएस) 919] में इस न्यायालय ने पुनः कहा: (एससीसी पृष्ठ 95, पैरा 25)

"25. ... यद्यपि विभागीय कार्यवाही में आरोपों को आपराधिक मुकदमे की तरह साबित करने की आवश्यकता नहीं होती है, अर्थात् सभी उचित संदेह से परे, हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि जाँच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है, जिसे दस्तावेजों का विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए कि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों के आधार पर आरोपों को साबित करने की संभावना प्रबल थी। ऐसा करते समय, वह किसी भी अप्रासंगिक तथ्य पर विचार नहीं कर सकता। वह प्रासंगिक तथ्यों पर विचार करने से इनकार नहीं कर सकता। वह सबूत का भार किसी और पर नहीं डाल सकता। वह केवल अनुमानों और अटकलों के आधार पर गवाहों की प्रासंगिक गवाही को अस्वीकार नहीं कर सकता। वह उन आरोपों की जाँच नहीं कर सकता, जिनका आरोप दोषी अधिकारी पर नहीं लगाया गया था।"

22. जसबीर सिंह बनाम पंजाब एंड सिंध बैंक [(2007) 1 एससीसी 566] में एक बार फिर इस न्यायालय ने नरिंदर मोहन आर्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड [(2006) 4 एससीसी 713] का अनुसरण करते हुए कहा: (जसबीर सिंह केस [(2007) 1 एससीसी 566], एससीसी पृष्ठ 570, पैरा 12)

"12. इसलिए, इस तरह के मामले में, उच्च न्यायालय को रिकॉर्ड में लाई गई सामग्री के संदर्भ में मामले के तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए था। वह ऐसा करने में विफल रहा।"

23. इसके अलावा, अनुशासनिक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी के आदेश किसी भी कारण से समर्थित नहीं हैं। चूंकि उनके द्वारा पारित आदेशों के गंभीर नागरिक परिणाम हैं, इसलिए उचित कारण बताए जाने चाहिए थे। यदि जांच

अधिकारी ने अपीलकर्ता द्वारा किए गए कबूलनामे पर भरोसा किया था, तो कोई कारण नहीं था कि उसी साक्ष्य के आधार पर आपराधिक अदालत द्वारा पारित किए गए आरोप-मुक्ति के आदेश पर विचार क्यों नहीं किया जाना चाहिए था। दोष को इंगित करने वाली रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री को साबित करना आवश्यक है। कुछ सबूतों के आधार पर निर्णय लिया जाना चाहिए, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य हो। साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान विभागीय कार्यवाही में लागू नहीं हो सकते हैं, लेकिन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू होते हैं। चूंकि जांच अधिकारी की रिपोर्ट केवल अपनी गवाही और अनुमानों और अनुमानों पर आधारित थी, इसलिए इसे कायम नहीं रखा जा सकता था। जांच अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से किसी भी सबूत द्वारा समर्थित नहीं थे। जैसा कि सर्वविदित है, संदेह चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, किसी भी परिस्थिति में उसे कानूनी सबूत का विकल्प नहीं माना जा सकता।"

16. एम.वी. बिजलानी (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय में मामले के उपरोक्त पहलू के संबंध में कानून को बहुत ही संक्षेप में निर्धारित किया गया है। इसके पैराग्राफ संख्या 14, 20 और 23 से 26 को नीचे पुनः प्रस्तुत करना लाभदायक होगा:-

"14. जांच रिपोर्ट के अवलोकन से हमें ऐसा प्रतीत होता है कि अनुशासनात्मक अधिकारियों ने गलत आधार पर कार्यवाही की। अपीलकर्ता पर मुख्य रूप से एसई-8 रजिस्टर का रखरखाव न करने का आरोप लगाया गया था। उस पर 4000 किलोग्राम टेलीग्राफ कॉपर वायर की चोरी या गबन या उसके दुरुपयोग का आरोप नहीं लगाया गया था। यदि उसके विरुद्ध उक्त मात्रा में कॉपर वायर के दुरुपयोग या गबन के लिए कार्यवाही की जानी थी, तो अनुशासनात्मक अधिकारी के लिए उस संबंध में उचित आरोप तय करना आवश्यक था। आरोप सीबीआई (भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो) से रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद तय किए गए थे। इसलिए, यह अपेक्षा की गई थी कि अपीलकर्ता द्वारा कॉपर वायर के दुरुपयोग/गबन के स्पष्ट आरोप तय किए गए होंगे। इसलिए, यदि अपीलकर्ता के विरुद्ध उस आधार पर विभागीय कार्यवाही की जानी थी, तो उस पर उसके द्वारा

संभाले गए स्टोर के गबन या दुरुपयोग का आरोप लगाया जाना चाहिए था। दूसरा आरोप यह दर्शाता है कि वह केवल लाइन के कामकाज की निगरानी करने में विफल रहा था। ऐसा कोई आरोप नहीं था कि वह उस तांबे के तार का हिसाब देने में विफल रहा जिस पर उसका भौतिक नियंत्रण था।

20. जांच अधिकारी ने इस प्रकार कार्यवाही की जैसे विभागीय कार्यवाही में अपीलकर्ता पर सम्पत्ति के गबन का आरोप लगाया गया हो। गवाहों ने न केवल तांबे के तार की चोरी की बात कही, बल्कि मस्टर रोल डायरी होने की बात भी कही। दयाशंकर नामक व्यक्ति के अनुसार डायरी में दर्शाया गया कार्य सही था। उसके अनुसार गीदम-बीजापुर सेक्शन में 300 पौंड लोहे के तार लगाने के अलावा पूरे सेक्शन में 150 पौंड तार लगाया गया था। उसने बताया कि तार के टूटे हुए टुकड़े एसआईटी डायरी के माध्यम से जगदलपुर भेजे गए थे। उसके अनुसार तांबे के तार लगाने का कार्य 5-11-1969 से शुरू होकर मार्च 1970 तक जारी रहा। अपीलकर्ता के उत्तराधिकारी श्री के.सी. सरिया ने मस्टर रोल और एसीई-8 रजिस्टर के रख-रखाव की बात कही। उनके अनुसार, अनुमान से संबंधित स्टोर का हिसाब लगाया गया और एसीई-8 शीट को अनुमान फ़ाइल में संलग्न किया गया। उन्होंने आगे कहा कि एसीई-8 शीट अनुमान फ़ाइल में थीं। श्री के.डी. श्रीवास्तव ने कहा था कि श्री काशीराम द्वारा तांबे के तार चोरी की रिपोर्ट थी।

23. जाहिर है, जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य और उनके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष आरोपों के अनुरूप नहीं थे। यदि यह दुरुपयोग या गबन का मामला था, तो अपीलकर्ता को इसके बारे में विशेष रूप से बताया जाना चाहिए था। उचित आरोप तय किए बिना ऐसे गंभीर आरोप की जांच नहीं की जा सकती थी। अन्यथा आरोप अस्पष्ट हैं। हमने पहले भी देखा है कि उच्च न्यायालय ने इस आधार पर भी कार्यवाही की कि डायरी का रखरखाव न करना तांबे के तार के दुरुपयोग के बराबर है।

24. श्री वर्मा ने पूछताछ किए जाने पर कहा कि अपीलकर्ता ने संभवतः इसका उपयोग बिना मंजूरी वाले कार्यों में किया होगा। यदि ऐसा है, तो इस आशय का एक विशिष्ट आरोप तय किया जाना चाहिए था।

25. यह सच है कि न्यायिक समीक्षा में न्यायालय का अधिकार क्षेत्र सीमित है। हालाँकि, अनुशासनात्मक कार्यवाही, अर्ध-आपराधिक प्रकृति की होने के कारण, आरोप को साबित करने के लिए कुछ सबूत होने चाहिए। हालाँकि विभागीय कार्यवाही में आरोपों को आपराधिक मुकदमे की तरह साबित करने की आवश्यकता नहीं होती है, यानी सभी उचित संदेह से परे, हम इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते कि जाँच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है, जिसे दस्तावेजों का विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए कि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों के आधार पर आरोपों को साबित करने की संभावना प्रबल थी। ऐसा करते समय, वह किसी भी अप्रासंगिक तथ्य पर विचार नहीं कर सकता। वह प्रासंगिक तथ्यों पर विचार करने से इनकार नहीं कर सकता। वह सबूत का बोझ नहीं बदल सकता। वह केवल अनुमानों और अनुमानों के आधार पर गवाहों की प्रासंगिक गवाही को अस्वीकार नहीं कर सकता। वह उन आरोपों की जाँच नहीं कर सकता, जिनके साथ अपराधी अधिकारी पर आरोप नहीं लगाया गया था।

26. जांच अधिकारी की रिपोर्ट में उपर्युक्त दोष हैं। अनुशासनिक प्राधिकारी और अपील्य प्राधिकारी के आदेश जो उक्त जांच रिपोर्ट पर आधारित हैं, इसलिए कायम नहीं रखे जा सकते। हमने यह भी देखा है कि न्यायाधिकरण ने इस मामले को किस तरह से निपटाया है। अपने निष्कर्षों पर उच्च न्यायालय ने यह भी टिप्पणी की कि उसने अपीलकर्ता द्वारा उठाए गए तर्कों पर गहराई से विचार नहीं किया। इस प्रकार न्यायाधिकरण भी अपने कार्यों का उचित ढंग से निर्वहन करने में विफल रहा।"

17. यह न्यायालय कुमार उपेन्द्र सिंह परिमार (सुप्रा) के मामले में माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का भी उल्लेख करना चाहेगा, जिसके पैराग्राफ संख्या 12, 15, 16, 18 और 19 नीचे पुनः उद्धृत किए गए हैं:-

"12. इन नियमों के अंतर्गत नियमित विभागीय जांच करने के लिए विस्तृत प्रावधान हैं। विभागीय जांच करने के लिए विभागीय गवाहों को पेश करके और जांच

अधिकारी द्वारा उनकी जांच करके दोषी कर्मचारी के खिलाफ आरोपों को साबित करना आवश्यक है। यदि दोषी कर्मचारी जांच में उपस्थित नहीं होता है, तो भी विभाग को अपने स्वयं के दस्तावेजों के समर्थन में गवाहों की जांच करके आरोप साबित करना होगा। विभागीय जांच में दोषी कर्मचारी पर आरोपों को साबित करने का कोई दायित्व नहीं है। आरोपों को विभाग द्वारा साबित किया जाना चाहिए। यदि विभाग द्वारा आरोपों के समर्थन में कोई गवाह नहीं बुलाया जाता है, तो उस स्थिति में यह माना जाना चाहिए कि विभाग ने अपना मामला साबित नहीं किया है और ऐसी स्थिति में जांच अधिकारी दोषी कर्मचारी के खिलाफ दोष के संबंध में निष्कर्ष सिर्फ इसलिए दर्ज नहीं कर सकता है क्योंकि दोषी कर्मचारी अनुपस्थित है।

15. इस संबंध में भारत संघ बनाम एच.सी. गोयल मामले में सर्वोच्च न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले का संदर्भ लिया जा सकता है, जो ए.आई.आर. 1964 एस.सी. 364 में रिपोर्ट किया गया है।

माननीय न्यायाधीश गजेन्द्र गडकर, न्यायमूर्ति ने इस संबंध में कानून का सारांश इस प्रकार दिया:-

"यह हो सकता है कि न्यायालयों में आपराधिक मुकदमों को नियंत्रित करने वाले तकनीकी नियम अनुशासनात्मक कार्यवाही पर आवश्यक रूप से लागू न हों, लेकिन फिर भी, यह सिद्धांत कि दोषियों को दंडित करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि निर्दोष को दंडित न किया जाए, नियमित आपराधिक मुकदमों के साथ-साथ अनुशासनात्मक जांच पर भी लागू होता है।"

16. चूंकि सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा निर्धारित उपरोक्त सिद्धांत का बाद में कई अन्य मामलों में पालन किया गया है, और आज तक इससे विचलित नहीं हुआ है, इसलिए यह न्यायालय प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा दिए गए इस स्पष्ट कथन को स्वीकार नहीं कर सकता कि चूंकि आरोप दस्तावेजों पर आधारित हैं, इसलिए आरोपों को पुष्ट करने के लिए किसी गवाह से पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है।

18. यह न्यायालय इस तर्क को उन कारणों से स्वीकार नहीं कर सकता है जो पहले ही बताए जा चुके हैं, जब अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा जांच का आदेश दिया गया है और जांच अधिकारी नियुक्त किया गया है तो याचिकाकर्ता का यह अधिकार नहीं है कि वह विभाग से यह मांग करे कि वह अपना मामला साबित करने के लिए गवाह पेश करे। दोषी कर्मचारी पर कभी भी जिम्मेदारी नहीं होती है, दूसरी ओर, आरोपों को साबित करने की जिम्मेदारी विभाग पर होती है और दोषी कर्मचारी के खिलाफ अपने मामले के समर्थन में गवाह पेश करना विभाग का काम है।

19. इसलिए, इस मामले के तथ्यों को देखते हुए, यह न्यायालय यह मानने के लिए बाध्य है कि अपने मामले के समर्थन में कोई सबूत पेश न करके, प्रतिवादी अधिकारी दोषी कर्मचारी के खिलाफ आरोपों को साबित करने में विफल रहे हैं। जहां आरोप साबित नहीं हुए हैं, वहां जांच रिपोर्ट अपना महत्व खो देती है और याचिकाकर्ता पर लगाई गई सजा बरकरार नहीं रखी जा सकती। जब किसी व्यक्ति को नौकरी से निकाला जाता है, तो यह उचित, न्यायसंगत और निष्पक्ष प्रक्रिया के आधार पर होना चाहिए। (देखें डी.के. जादव बनाम जे.एम.ए. इंडस्ट्रीज लिमिटेड, (1993)3 एससीसी पृष्ठ 259: 1994(2) पीएलजेआर (एससी)55 में रिपोर्ट किया गया।”

18. इस प्रकार, यह न्यायालय पाता है कि जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, क्योंकि उक्त जांच के दौरान केवल दो औपचारिक गवाहों की जांच की गई थी, जिन्होंने आर्थिक कार्यालय इकाई पीएस केस संख्या 18/2021 की एफआईआर और याचिकाकर्ता के निलंबन के दिनांक 25.10.2021 के आदेश को साबित किया था और जहां तक दस्तावेजी साक्ष्य का संबंध है, अभियोजन पक्ष द्वारा केवल उक्त एफआईआर और दिनांक 25.10.2021 के निलंबन के आदेश की एक प्रति पर भरोसा किया गया था,

हालांकि, अभियोजन पक्ष द्वारा मौखिक या दस्तावेजी कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया, जिससे यह साबित हो सके कि याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित संपत्तियों की वास्तविक संख्या और उनके विशिष्ट विवरण उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके बाजार मूल्य आदि से अधिक हैं, इस प्रकार, यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है, इस तथ्य के अलावा कि जांच अधिकारी के समक्ष कोई भी सामग्री/साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे वह इस निष्कर्ष पर पहुंच सके कि रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर आरोपों को साबित करने की संभावना अधिक है। इसलिए, इस मामले के तथ्यों में, यह न्यायालय यह मानने के लिए बाध्य है कि अपने मामले के समर्थन में कोई सबूत पेश न करके, प्रतिवादी अधिकारी याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोपों को साबित करने में विफल रहे हैं, इसलिए जांच रिपोर्ट अपना सारा महत्व खो देती है, खासकर इसलिए क्योंकि यह किसी सबूत पर आधारित नहीं है। परिणामस्वरूप, जांच अधिकारी की दिनांक 02.05.2022 की रिपोर्ट, विकृत और बिना किसी साक्ष्य पर आधारित होने के कारण, रद्द की जाती है।

19. अब, पुलिस अधीक्षक, लखीसराय द्वारा पारित दिनांक 10.05.2022 के दण्ड आदेश पर आते हैं, इस न्यायालय को लगता है कि यह मात्र तथ्यों का वर्णन है और न तो

याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 04.05.2022 के दूसरे कारण बताओ नोटिस के दिनांक 07.05.2022 के उत्तर के माध्यम से प्रस्तुत बचाव से निपटता है, न ही याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित की गई संपत्ति/संपत्तियों के बारे में कोई विशिष्ट विवरण का उल्लेख करता है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके सबूत से अधिक है, इसलिए यह भी किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, इसके अलावा यह एक गूढ़ आदेश है जो उचित विचार-विमर्श को नहीं दर्शाता है क्योंकि इसमें याचिकाकर्ता को बर्खास्तगी की सजा देने के लिए कोई ठोस, स्पष्ट या संक्षिप्त कारण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं, जो निर्णय लेने की प्रक्रिया का एक अनिवार्य हिस्सा है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **ओरिक्स फिशरीज प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है, जो (2010) 13 एससीसी 427 में रिपोर्ट किया गया है, माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा **जेनेश्वर सिन्हा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है; जो 2022(1) पीएलजेआर 169 में रिपोर्ट किया गया है, इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा **डॉ. कमला सिंह बनाम बिहार राज्य** के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है; जो 2023(1) पीएलजेआर 803 में रिपोर्ट किया गया है और माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा **डॉ. रवींद्र नाथ सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य** के मामले में

दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है; जो 1983 पीएलजेआर 92 में रिपोर्ट किया गया है। इस प्रकार, यह न्यायालय पाता है कि दिनांक 10.05.2022 का दण्ड आदेश कानून की दृष्टि में टिकने योग्य नहीं है, न केवल इस आधार पर कि यह एक गूढ़ और अपरिपक्व आदेश है, जिसमें पूरी तरह से विवेक का प्रयोग नहीं किया गया है, जिसमें याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव को ध्यान में नहीं रखा गया है, इसके अलावा अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता को दण्ड देने के लिए कोई स्पष्ट, ठोस या संक्षिप्त कारण प्रस्तुत नहीं किया गया है, बल्कि इस आधार पर भी कि यह एक औपचारिक जांच रिपोर्ट पर आधारित है, जिसे पहले ही रद्द किया जा चुका है, इसलिए दिनांक 10.05.2022 का दण्ड आदेश रद्द किया जाता है। इस न्यायालय ने यह भी पाया कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 10.05.2022 को दंड का आदेश पारित करते समय न केवल कुछ बाहरी सामग्रियों पर भरोसा किया है, बल्कि दिनांक 26.03.2022 के आरोप पत्र/ज्ञापन के माध्यम से याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों से भी आगे बढ़कर काम किया है, इस प्रकार एक ऐसे निष्कर्ष के आधार पर लगाया गया दंड जो कभी आरोपों का विषय नहीं था, पूरी तरह से अवैध है। वर्तमान मामले में, दिनांक 10.05.2022 का दंड आदेश एक गलत आधार पर आधारित है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कई आपराधिक मामले

लंबित हैं और उसका पिछला इतिहास खराब है, हालांकि 26.03.2022 के आरोप ज्ञापन के माध्यम से याचिकाकर्ता के खिलाफ कभी भी आरोप नहीं लगाया गया था, इसलिए इस आधार पर भी दिनांक 10.05.2022 का दंड आदेश रद्द किए जाने योग्य है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एम.वी. बिजलानी (सुप्रा) के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जाना चाहिए, साथ ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नरिंदर मोहन आर्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य के मामले में दिए गए निर्णय का भी संदर्भ लिया जाना चाहिए; (2006) 4 एससीसी 713 में रिपोर्ट किया गया; जिसका पैराग्राफ संख्या 26 नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

“26. हमारी राय में विद्वान एकल न्यायाधीश और परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने स्वयं से सही प्रश्न नहीं पूछा। मामले को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। सीमित अधिकार क्षेत्र के बावजूद एक सिविल न्यायालय, ऐसे मामले में हस्तक्षेप करने का हकदार था जहां जांच अधिकारी की रिपोर्ट किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं थी। एक दोषी कर्मचारी द्वारा सिविल न्यायालय और रिट न्यायालय में दायर किए गए मुकदमे में, यदि विभागीय कार्यवाही में प्राप्त निष्कर्षों पर उसके समक्ष प्रश्न उठाए जाते हैं, तो उसे निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए: (1) जांच अधिकारी को जांच के दौरान बाहरी स्रोतों से कोई भी सामग्री एकत्र करने की अनुमति नहीं है। (देखें असम राज्य बनाम महेंद्र कुमार दास [(1970) 1 एससीसी 709]) (2) घरेलू जांच में प्रक्रिया में निष्पक्षता प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का एक हिस्सा है। (देखें खेम चंद बनाम भारत संघ [1958 एससीआर] और उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ओम प्रकाश गुप्ता [(1969) 3 एससीसी 775]) (3) विवेकाधीन शक्ति के प्रयोग में दो तत्व शामिल होते हैं- (i) वस्तुनिष्ठ, और (ii) व्यक्तिपरक और वस्तुनिष्ठ तत्व के प्रयोग का

अस्तित्व व्यक्तिपरक तत्व के प्रयोग के लिए एक शर्त है। (के.एल. त्रिपाठी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया [(1984) 1 एससीसी 43] देखें। (4) प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के किसी भी कठोर नियम को निर्धारित करना संभव नहीं है जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है, लेकिन कार्रवाई में निष्पक्षता की अवधारणा आधार है। (सवाई सिंह बनाम राजस्थान राज्य [(1986) 3 एससीसी 454] देखें। (5) जांच अधिकारी को आरोपों से परे जाने की अनुमति नहीं है और किसी निष्कर्ष के आधार पर लगाया गया कोई भी दंड, जो आरोपों का विषय-वस्तु नहीं है, पूरी तरह से अवैध है। [देखें निदेशक (निरीक्षण एवं गुणवत्ता नियंत्रण) निर्यात निरीक्षण परिषद भारत बनाम कल्याण कुमार मित्रा [(1987) 2 कैल एलजे 344]। (6) संदेह या अनुमान सबूत की जगह नहीं ले सकता, यहाँ तक कि घरेलू जाँच में भी। रिट कोर्ट कुछ परिस्थितियों में किसी न्यायाधिकरण या प्राधिकरण के तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का हकदार है। (देखें सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम प्रकाश चंद जैन [(1969) 1 एससीआर 735: एआईआर 1969 एससी 983], कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त [(1999) 2 एससीसी 10]।”

20. अपीलीय प्राधिकार का दिनांक 25.07.2022 का आदेश तथा पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा दिनांक 21.03.2023 को याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन पर पारित आदेश भी उसी दोष से ग्रस्त है, जिस पर इस न्यायालय द्वारा पूर्ववर्ती पैराग्राफों में विचार किया जा चुका है, अतः उन्हें भी इस तथ्य के अलावा अपास्त किया जाना चाहिए कि दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट तथा दिनांक 10.05.2022 के दण्ड आदेश को निरस्त करने के मद्देनजर उनके पास कोई आधार नहीं है।

21. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा पूर्वोक्त कारणों से, दिनांक 02.5.2022 की जांच रिपोर्ट, दिनांक 10.05.2022 को पुलिस अधीक्षक, लखीसराय द्वारा पारित याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने का दण्ड आदेश, दिनांक 25.07.2022 को पुलिस उप

महानिरीक्षक (कार्मिक), बिहार, पटना द्वारा पारित अपीलीय आदेश तथा याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन पर दिनांक 21.03.2023 को पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा पारित आदेश को निरस्त किया जाता है।

22. दिनांक 02.05.2022 की जांच रिपोर्ट, दिनांक 10.05.2022 के सेवा से बर्खास्तगी के दंड के आदेश, दिनांक 25.07.2022 के अपीलीय आदेश और याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन पर पारित दिनांक 21.03.2023 के आदेश को रद्द करने के मद्देनजर, अब अगला सवाल यह उठता है कि क्या याचिकाकर्ता बकाया वेतन पाने का हकदार होगा, खासकर वर्तमान मामले जैसे मामले में, जिसमें इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता के मामले को सेवा से गलत तरीके से बर्खास्तगी का मामला पाया है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दीपाली गुंडू सुरवासे बनाम क्रांति जूनियर अध्यापक महाविद्यालय एवं अन्य के मामले में दिए गए निर्णय का संदर्भ देना समीचीन होगा, जिसकी रिपोर्ट (2013) 10 एससीसी 324 में दी गई है, जिसके पैराग्राफ संख्या 38 से 38.7 नीचे पुनः प्रस्तुत किए गए हैं:-

"38. उपर्युक्त निर्णयों से जो प्रस्ताव निकाले जा सकते हैं वे हैं:

38.1. सेवा की गलत समाप्ति के मामलों में, सेवा की निरंतरता और पिछले वेतन के साथ बहाली सामान्य नियम है।

38.2. उपर्युक्त नियम इस शर्त के अधीन है कि बकाया वेतन के मुद्दे पर निर्णय करते समय, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी या न्यायालय कर्मचारी/कर्मचारी की सेवा अवधि, कर्मचारी/कर्मचारी के विरुद्ध सिद्ध किए गए कदाचार की प्रकृति, यदि कोई हो, नियोक्ता की वित्तीय स्थिति और इसी प्रकार के अन्य कारकों को ध्यान में रख सकता है।

38.3. सामान्यतः, जिस कर्मचारी या कामगार की सेवाएँ समाप्त कर दी गई हैं और जो पिछला वेतन पाने का इच्छुक है, उसे या तो न्यायाधिकरण या प्रथम दृष्टया न्यायालय के समक्ष दलील देनी होगी या

कम से कम यह बयान देना होगा कि वह लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था या कम वेतन पर नियोजित था। यदि नियोक्ता पूरा पिछला वेतन देने से बचना चाहता है, तो उसे दलील देनी होगी और यह साबित करने के लिए ठोस सबूत भी पेश करने होंगे कि कर्मचारी/कामगार लाभकारी रूप से नियोजित था और उसे सेवा समाप्ति से पहले मिलने वाले वेतन के बराबर वेतन मिल रहा था। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह स्थापित कानून है कि किसी विशेष तथ्य के अस्तित्व को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो उसके अस्तित्व के बारे में सकारात्मक कथन करता है। नकारात्मक तथ्य को साबित करने की तुलना में सकारात्मक तथ्य को साबित करना हमेशा आसान होता है। इसलिए, जब कर्मचारी यह दिखा देता है कि वह कार्यरत नहीं था, तो नियोक्ता पर यह दायित्व आ जाता है कि वह विशेष रूप से दलील दे और साबित करे कि कर्मचारी लाभकारी रूप से कार्यरत था और उसे समान या काफी हद तक समान वेतन मिल रहा था।

38.4. ऐसे मामले जिनमें श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरण औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 11 ए के तहत शक्ति का प्रयोग करता है और पाता है कि भले ही कर्मचारी/कर्मचारी के खिलाफ की गई जांच प्राकृतिक न्याय के नियमों और/या प्रमाणित स्थायी आदेशों, यदि कोई हो, के अनुरूप है, लेकिन यह मानता है कि सजा साबित किए गए कदाचार के अनुपात में नहीं थी, तो उसे पूरा पिछला वेतन न देने का विवेकाधिकार होगा। हालाँकि, यदि श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरण पाता है कि कर्मचारी या कामगार किसी भी कदाचार का दोषी नहीं है या नियोक्ता ने कोई झूठा आरोप लगाया है, तो पूरा पिछला वेतन देने के लिए पर्याप्त औचित्य होगा।

38.5. ऐसे मामले जिनमें सक्षम न्यायालय या न्यायाधिकरण यह पाता है कि नियोक्ता ने वैधानिक प्रावधानों और/या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन किया है या कर्मचारी या कामगार को प्रताड़ित करने का दोषी है, तो संबंधित न्यायालय या न्यायाधिकरण को पूर्ण बकाया वेतन का भुगतान करने का निर्देश देने का पूरा अधिकार होगा। ऐसे मामलों में, उच्च न्यायालयों को संविधान के अनुच्छेद 226 या 136 के तहत शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए और श्रम न्यायालय आदि द्वारा पारित पुरस्कार में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि कर्मचारी/कामगार के पूर्ण बकाया वेतन पाने के अधिकार या नियोक्ता के भुगतान के दायित्व पर अलग राय बनने की संभावना है। अदालतों को

हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि गलत/अवैध सेवा समाप्ति के मामलों में, गलत करने वाला नियोक्ता है और पीड़ित कर्मचारी/कर्मचारी है और नियोक्ता को कर्मचारी/कर्मचारी को पूर्ण बकाया वेतन के रूप में भुगतान करने के बोझ से मुक्त करके उसके गलत कार्यों के लिए प्रीमियम देने का कोई औचित्य नहीं है।

38.6. कई मामलों में, उच्च न्यायालयों ने इस आधार पर प्राथमिक न्यायिक प्राधिकरण के निर्णय में हस्तक्षेप किया है कि मुकदमे को अंतिम रूप देने में बहुत समय लगा है, जबकि अधिकांश मामलों में पक्षकार इस देरी के लिए जिम्मेदार नहीं हैं। मामलों के निपटान में देरी का मुख्य कारण बुनियादी ढांचे और जनशक्ति की कमी है। इसके लिए वादियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता या दंडित नहीं किया जा सकता। यदि किसी कर्मचारी या कामगार को केवल इसलिए पिछला वेतन देने से मना कर दिया जाता है क्योंकि उसकी सेवा समाप्त होने और बहाली के आदेश को अंतिम रूप दिए जाने के बीच बहुत समय बीत चुका है, तो यह उसके साथ बहुत बड़ा अन्याय होगा। अदालतों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि इनमें से अधिकांश मामलों में नियोक्ता कर्मचारी या कामगार के मुकाबले लाभप्रद स्थिति में होता है। वह पीड़ित यानी कर्मचारी या कामगार की पीड़ा को बढ़ाने के लिए सर्वश्रेष्ठ कानूनी दिमाग की सेवाओं का लाभ उठा सकता है, जो एक निश्चित मात्रा में प्रसिद्ध वकील पर पैसा खर्च करने की विलासिता को बर्दाश्त नहीं कर सकता। इसलिए, ऐसे मामलों में हिंदुस्तान टिन वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम कर्मचारी में सुझाए गए तरीके को अपनाना समझदारी होगी।

38.7. जे.के. सिंथेटिक्स लिमिटेड बनाम के.पी. अग्रवाल में की गई टिप्पणी कि बहाली पर कर्मचारी/कर्मचारी अधिकार के रूप में सेवा की निरंतरता का दावा नहीं कर सकता, ऊपर उल्लिखित तीन न्यायाधीशों की पीठ 7,8 के निर्णयों के अनुपात के विपरीत है और इसे अच्छे कानून के रूप में नहीं माना जा सकता। निर्णय का यह हिस्सा कर्मचारी/कर्मचारी की बहाली की अवधारणा के भी विरुद्ध है।

23. इस प्रकार, गलत तरीके से सेवा समाप्त किए जाने के मामलों में, सेवा की निरंतरता के साथ बहाली और 100% पिछला वेतन देना सामान्य नियम है। विचारणीय एक अन्य कारक यह है कि यदि नियोक्ता ने वैधानिक प्रावधानों और/या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन किया है या

कर्मचारी या कामगार को पीड़ित करने का दोषी है, तो संबंधित न्यायालय को पूर्ण पिछला वेतन देने का निर्देश देने में पूरी तरह से न्यायोचित माना जाएगा। इस न्यायालय का मानना है कि वर्तमान मामला प्रतिवादियों द्वारा याचिकाकर्ता के साथ घोर अन्याय का मामला है तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर्याप्त रूप से यह प्रदर्शित करती है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की अनदेखी की गई है तथा याचिकाकर्ता को प्रताड़ित किया गया है, अतः इस न्यायालय का यह विचार है कि दिनांक 02.5.2022 की जांच रिपोर्ट, दिनांक 10.05.2022 के याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने के दण्ड के आदेश, दिनांक 25.07.2022 के अपीलीय आदेश तथा याचिकाकर्ता द्वारा दायर ज्ञापन पर पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 21.03.2023 के आदेश को रद्द करने के परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता सभी परिणामी लाभों के साथ-साथ पूर्ण बकाया वेतन पाने का हकदार है।

24. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा उपरोक्त कारणों से, रिट याचिका को प्रतिवादियों को यह निर्देश देते हुए स्वीकार किया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को सेवा में पुनः बहाल करें, सेवा जारी रखें तथा उसे आज से तीन महीने के भीतर सभी परिणामी लाभों सहित पिछला वेतन दें।

(मोहित कुमार शाह, न्यायमूर्ति)

एस.एसबी/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।